लेखक परिचय

डॉ. हरिओम

जीन्द (हरियाणा) के ग्रामीण आंचल में 10 जनवरी 1959 को जन्में तथा कृषक परिवार की पृष्ठभूमि में आरम्भिक शिक्षा के बाद पी. एच.डी. (सस्य विज्ञान) की डिग्री चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार से प्राप्त की। डिग्री हेतू किए गए संकर धान पर उत्तम शोध कार्य के लिए डॉ. वी.डी. कश्यप स्वर्ण पदक से सम्मानित।

हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय के सस्य विज्ञान विभाग में वरिष्ठ वैज्ञानिक के पद पर कार्यरत्त हैं। पिछले 24 वर्षों से मुख्य रूप से धान–गेहूं फसल चक्र, फसल प्रणाली व कृषि प्रणाली के उत्पादन सम्बन्धी शोध कार्य में संलग्न हैं। साथ ही देश एवं विदेश की विभिन्न प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में 150 से अधिक शोध पत्रों/लेखों और 6 पुस्तकों/बुलेटिन के लेखन में योगदान किया है। अन्तर्राष्ट्रीय सेमीनार 'नेचुरल रिसोर्स मैनेजमेंट' में श्रेष्ठ शोध पत्र प्रस्तुति हेतू सम्मानित।

आध्यात्मिक पुनर्जन्म के लिए 14 नवम्बर 1986 को राधास्वामी दयाल परम् संत ताराचन्द जी महाराज के चरण कमलों में पहुंचे और दीक्षा ग्रहण की। सतगुरू की आज्ञा से 1 फरवरी 1998 से आध्यात्मिक कार्य के मिशन में संलग्न हैं। अध्यात्म को वैज्ञानिक आधार पर प्रस्तुत किया और 18 आध्यात्मिक पुस्तकों की रचना की।

अवतार अवतरण रहस्य

राधास्वामी सत्संग ताराधाम, कुरूक्षेत्र
(हरियाणा)

अवतार अवतरण रहस्य

सर्वाधिकार सुरक्षित
जून 2007

डा० हरिओम
वरिष्ठ वैज्ञानिक

राधास्वामी सत्संग ताराधाम, कुरूक्षेत्र
(हरियाणा)

विषय - वस्तु

क्रम सं.	विषय	पष्ठ सं.
1.	आध्यात्मिक संकल्प, मार्ग एवं लक्ष्य	1
2.	अवतार अवतरण रहस्य	5
3.	जिज्ञासुओं के लिए प्रश्न	35
4.	पुस्तक सूची	36

राधास्वामी।

राधास्वामी दयाल की दया राधास्वामी सहाय।

राधास्वामी।

समर्पित

राधास्वामी दयाल परम् संत

सतगुरू ताराचन्द जी महाराज

के चरण कमलों में।

आध्यात्मिक संकल्प, मार्ग एवं लक्ष्य

राधास्वामी दयाल परम् संत ताराचन्द जी महाराज की प्रेरणा से हमने संकल्प लिया है कि आध्यात्मिक कार्यों के लिए किसी से भी पैसों की सेवा नहीं ली जाएगी और किसी आश्रम की स्थापना नहीं की जाएगी क्योंकि मेरा विश्वास है कि यदि कोई आध्यात्मिक सूर्य उदय होना चाहता है तो वह इतना सक्षम है कि वह अपना रास्ता स्वयं ही बनाएगा, यह उसकी आवश्यकता है और मजबूरी भी। यदि वह स्वयं की अभिव्यक्ति के लिए किसी धन और आश्रमों का मोहताज है तो मुझे ऐसा अध्यात्म स्वीकार नहीं है।

व्यक्ति का धन दीनहीन की सेवा के लिए हो, गुरू की विलासिता के लिए नहीं। आज के अध्यात्म का मार्ग यदि झोंपड़ी की तरफ नहीं जाता है तो वह गुरूओं के आलीशान महलों की तरफ तो कतई नहीं जा सकता है। सर्वभूतों, दीन-दुःखियों और अपने चारों तरफ के वातावरण में ही सतगुरू के दर्शन हों। मनुष्य का हृदय ही आश्रम हो जो हर जीव-अजीव को शांति दे और उसके लिए सुख और परोपकार की कामना करे। व्यक्ति का घर ही आश्रम हो जहां पर माता-पिता और आगन्तुक परमात्मा तुल्य हों। शान्ति, विकास और सुरक्षा का आधार कम्यून, संघ या कोई गठजोड़ नहीं बल्कि स्वयं व्यक्ति हो जो समाज व वातावरण की जरूरत को समझे। व्यक्ति के विकास से समाज और देश के विकास का मार्ग स्वयं ही निर्मित होगा। यही आध्यात्मिक साम्यवाद है जो व्यक्ति एवं घर से आरम्भ होता है और विश्वमानव या महामानव के निर्माण पर इसकी पूर्ति होती है।

अध्यात्म का कार्य करने के लिए और उसमें जीने के लिए हमें किसी मन्दिर, मस्जिद, चर्च या गुरूद्वारे की आवश्यकता नहीं है। इस कार्य के लिए केवल एक ही इन्फरा-स्ट्रक्चर या व्यवस्था चाहिए और वह है मनुष्य रूपी शिवालय, मनुष्य रूपी देवालय। मिट्टी के एक तत्व से बने तीर्थ स्थान, मूर्ति या शास्त्र इसकी आवश्यकता नहीं हैं बल्कि परमात्मा के जीवन से भरपूर पंचतत्व से निर्मित मनुष्य का शरीर चाहिए जिसके अन्दर

स्वयं सष्टि का स्वामी निवास करता है। मनुष्य के मन और हृदय में सारे देवी-देवता, सारे तीर्थ व शास्त्र समाए रहते हैं और यहीं से इन सभी की पैदायश है।

बुल्लेशाह कहते हैं-

मन्दिर ढ़ाहदे मस्जिद ढ़ाहदे, ढ़ाहदे जो कुछ ढ़हंदा ए।
पर दिल किसी दा न ढ़ाहवी रब दिलां विच रहंदा ए।।

मेरा ऐसा मानना है कि यदि मनुष्य के अन्दर आध्यात्मिक सूर्य अर्थात् विज्ञानमय या आनन्दमय पुरूष की एक किरण भी संचित हो जाती है तो वहां पर हर तरह की बरकत स्वतः ही बहने लगती है। वह धरती सबको अपनी तरफ खींचने लगती है। सामाजिक, आध्यात्मिक, राजनैतिक व आर्थिक चेतना का विकास होने लगता है। किसी समाज में यदि एक भी व्यक्ति ऐसी अवस्था को प्राप्त कर लेता है तो वह समाज ही नहीं बल्कि देश भी उन्नति के शिखर पर पहुंचता है। ऐसे समाज या देश को हानि पहुंचाना किसी के लिए भी सम्भव नहीं है। उत्थल-पुत्थल अवश्य आती हैं लेकिन हर उत्थल-पुत्थल जीवन की नई-२ सम्भावनाओं व चुनौतियों को जन्म देती है। कर्मयोगी समाज के लिए यही सम्भावनाएं और चुनौतियां वरदान बनती हैं और सुनहरे भविष्य का निर्माण करती हैं।

मनुष्य के लिए शारीरिक या मानसिक धर्म अलग-२ हो सकते हैं लेकिन आत्मा या रूह का केवल एक ही धर्म हो सकता है और वह है प्रेम। सच्चा प्रेम मनुष्य को जोड़ता है तोड़ता नहीं। प्रेम अनहद है जो हर हद को पार करने का सामर्थ्य रखता है। प्रेम की कोई जात नहीं है, प्रेम किसी धर्म या सम्प्रदाय का मोहताज नहीं है। वह यह नहीं पूछता कि सामने वाला व्यक्ति हिन्दू है या मुसलमान, सिख है या ईसाई, ब्राह्मण है या शुद्र। वह तो केवल देना जानता है, लेना उसकी फितरत ही नहीं है। अतः इस भौतिक संसार में प्रेम ही धर्म है, प्रेम ही मार्ग और प्रेम ही मंजिल है। इस मार्ग में किसी अवतार, पैगम्बर या मसीहा की बाहरी पूजा के लिए कोई स्थान नहीं है लेकिन इनके आदर्शों का अनुसरण करके हमें इन्हें अपने ही अन्दर जीवित करना होगा। इनकी दैविक चेतना का अनुभव हमें अपनी ही आत्मा के अन्दर करना होगा तभी विश्व गांव का सपना साकार

हो सकेगा और धरती पर स्वर्ग बनाने की इच्छा की प्राप्ति हो सकेगी। वरना धर्म और समाज की ये दीवारें मनुष्य को हमेशा आपस में बांटती ही रहेंगी।

प्रेम सार्वभौमिक धर्म है, जिसे मनुष्य के साथ-२ पशु और पौधा भी मानता है। जीव-अजीव की यह सारी सष्टि इसी प्रेम के खिंचाव की शक्ति के कारण ही भिन्न-२ अस्तित्वों में बंटी हुई है और हर एक अस्तित्व अपनी पूर्ति के लिए दूसरे अस्तित्व के चारों ओर चक्कर काट रहा है। पौधा, पशु, पक्षी, जीव-अजीव हमारे किसी धर्म या शास्त्र को नहीं जानते, वे तो बस प्रेम की भाषा को पहचानते हैं। अतः प्रेम का धर्म (धर्मे-सीना) ही व्यावहारिक धर्म है जो मनुष्य को शाश्वत धर्म या धर्मे-हकीकत से वाकिफ करवाता है। इसलिए मानव कल्याण के इस यज्ञ में हमें किसी धन या द्रव्य की आवश्यकता नहीं है बल्कि प्रेम व पवित्र विचार की आहुति चाहिए और उसी के प्रति संकल्प की आवश्यकता है।

माता-पिता और परिवार से मिली आध्यात्मिक पष्ठभूमि ने हमेशा मेरा मार्गदर्शन किया है और जीवन में आगे बढ़ने के लिए प्रेरित किया है। आध्यात्मिक मिशन का यह कार्य मेरी पत्नी और आध्यात्मिक सहयोगी श्रीमती बिमल की प्रेरणा से आरम्भ हुआ। मेरे सतगुरू राधास्वामी दयाल परम् संत ताराचन्द जी महाराज ने इस प्रेरणादायक चिंगारी को अपनी तवज्जह और दया के हाथ से ध्यान-भजन की हवा देकर ब्रह्म अग्नि में परिवर्तित किया जो हर समय योगयज्ञ की ज्योति (नूर) बनकर अन्दर जलती रहती है और अनहद नाद बनकर खुदाई कलमा (वर्ड) सुनाती रहती है। सम्भवतः इसी आध्यात्मिक चिंगारी को आंखों में देखकर मेरे सतगुरू शहनशाह ने मेरा नामकरण किया और मुझे 'प्रकाश' के नाम से पुकारने लगे। तब से वे हम दोनों को बिमलप्रकाश कहकर पुकारते थे। आज सत्संग का यह कार्य सतगुरू-मुर्शिद की दया और मेहर से ही आगे बढ़ रहा है और इसमें बिमल का विशेष योगदान है। आध्यात्मिक दष्टि से देखा जाए तो बिमल का ध्यान हमेशा ही सारी संगत में अव्वल रहा जिसकी चर्चा मेरे सतगुरू समय-समय पर संगत के बीच में करते रहते

थे।

यह मैं उन लोगों के लिए लिख रहा हूं जो स्त्री को तुच्छ व भोग की वस्तु समझते हैं और कहते हैं कि औरत आध्यात्मिक ऊँचाई को नहीं छू सकती है। मेरे सतगुरू कहते थे कि परमात्मा ने दो ही जातियां बनाई हैं, एक स्त्री व दूसरी पुरूष। यही दो जातियां पुरूष और प्रकति बनकर सष्टि का सजन करती हैं। जब स्त्री और पुरूष स्वयं का आधा अस्तित्व एक-दूसरे को समर्पित कर देते हैं तो ये अर्धनारीश्वर बनकर एक दूसरे का अंग-प्रत्यंग होकर कार्य करते हैं और एकता के सूत्र में बंध जाते हैं। प्रकति जब अपना पूर्ण समर्पण कर देती है तो यह परामाया या पराप्रकति या राधा बनकर पुरूष (स्वामी) के अन्दर समा जाती है और पुरूष पराप्रकति या पराशक्ति बनकर अपने परम् शुद्ध रूप में स्थित हो जाता है जहां पर लिंग-भेद, जाति-पाति और धर्म-सम्प्रदाय सभी गुण व आकार अस्तित्वहीन हो जाते हैं। ऐसे ब्रह्मरूप या सतगुरू रूप का अनुभव जो भी व्यक्ति करता है वही ब्राह्मण कहलाता है। कुण्डलीनी शक्ति के सुदर्शन चक्र और आध्यात्मिक सूर्य व चन्द्रमा के दर्शन स्वयं के अन्दर करता है वही सूर्यवंशी और चन्द्रवंशी कहलाता है। ऐसे आत्मिक स्रोत के आगे सारी भौतिक सत्ता की ऐश्वर्यता नतमस्तक हो जाती है और ऐसे स्रोत का मार्ग यदि किसी सांसारिक विलासिता का मोहताज है तो यह एक विडम्बना है। मैं यह नहीं कहता कि मुझे यह सब प्राप्त हो गया है बल्कि इस आध्यात्मिक लक्ष्य के प्रति मैं प्रयासरत हूं ताकि पूरी मानवता इस लक्ष्य की प्राप्ति में सहभागी बन सके। अतः इस प्रयास रूपी यज्ञ में मैं आप सब को प्रेम और पवित्र विचार की आहुति देने के लिए आमन्त्रित करता हूं। मुझे विश्वास है कि एक दिन यह आध्यात्मिक लक्ष्य अवश्य ही फलित होगा और पथ्वी पर रहने वाले मानस का अतिमानसीकरण होगा।

प्रस्तुत संकलन इसी आध्यात्मिक मिशन की जागति व पूर्ति के लिए किया गया है। हमें आशा है कि यह संकलन एक क्रियात्मक, रचनात्मक और दिव्यात्मक अध्यात्म को पाठकों के हृदय में प्रज्जवलित करेगा और आत्मिक धर्म तथा सच्चे अध्यात्म की खोज करने में सहायता करेगा।

राधास्वामी।

अवतार अवतरण रहस्य

जीसस की मां मरिमय माता कुंती की तरह उस समय कुंवारी थी जब उन्होंने गर्भ धारण किया। ऐसे में वे किन-किन अन्तर्द्वन्दों व संघर्ष से गुजरी होंगी, इसके बारे में केवल कल्पना ही की जा सकती है। वह भी उस समय जब यहूदी धर्म में धार्मिक नियमों के अनुसार ऐसा करना एक गुनाह माना जाता था और सख्त दण्ड दिया जाता था। ऐसी परिस्थितियों से होकर जिस बच्चे का जन्म होता है वह कुदरत के संघर्ष से बच नहीं सकता है। कुन्ती महाभारत के युद्ध से पहले स्वयं कर्ण के पास गई और अर्जुन के लिए जीवन की फरियाद की। अर्जुन के लिए जीवन दान का अर्थ था कर्ण के लिए मौत का फरमान। वास्तव में कर्ण के लिए मौत का यह फरमान महाभारत के युद्ध के समय नहीं लिखा गया था बल्कि स्वयं कुन्ती के द्वारा गर्भ के समय दोनों पुत्रों के अन्दर डाला गया विचार या संस्कार था जिसमें उसने कर्ण के लिए मौत और अर्जुन के लिए जीवन का चुनाव किया था। युद्ध के समय तो उस ख्याल या संस्कार की केवल पुनरावति थी।

जो भी अपना विस्तार करना चाहता है वही इतना विस्तत हो जाना चाहता है कि उसके समान कोई न रहे। उसकी तुलना किसी से न हो सके। हर गुरू, हर राजा इतिहास में अद्वितीय बनकर उतर जाना चाहता है। उसकी पूजा सदियों तक आराध्य के

रूप में होती रहे। उसके नाम पर सड़कों, भवनों और नगरों का निर्माण किया जाए। शिक्षा संस्थान भी उसी के नाम पर समर्पित हों। साधारण व्यक्ति में भी यह लालसा होती है। यदि वह कहीं मंदिर या धर्मशाला बनवाता है तो उस पर अपने नाम का पत्थर अवश्य लगवाना चाहता है ताकि वह दूसरे लोगों द्वारा जाना जाए।

हर व्यक्ति अपने नाम को सदा के लिए स्थिर करना चाहता है। वह जितना अधिक अस्थिर है उतना ही अधिक स्थिर होकर इतिहास में उतर जाना चाहता है। हर पत्थर पर, हर वस्तु पर अपने नाम की मोहर लगवाना चाहता है। शायद ही कोई व्यक्ति ऐसा हो जिसके अन्दर यह लालसा ना हो। लेकिन अस्तित्व को यह मंजूर नहीं है। अस्तित्व उस बहती हुई धारा के समान है जो हर पल अपनी करवट बदलती हुई चलती है और मानव द्वारा बनाए गए हर नाम और निशान को मिटाती चलती है।

एक रास्ता सांसारिक लोगों का रास्ता है। इसमें अहंकार की पुष्टि होती है। मन और बुद्धि की अस्थिरता में अहंकार की स्थिति होती है। बहती हुई धारा में भी कोई ना कोई वस्तु ऐसी है जो ठहर जाना चाहती है। अहंकार बनकर ही सही, लेकिन ठहराव और शांति में आ जाना चाहती है। अहंकार ही संसार में नाम व रूप देता है और यदि नाम व रूप में संसार का विभाजन न हो तो इसका विकास न हो सकेगा। फरदर डिविजन न हो पाएगा। अपने अन्तर में सबसे पहले आत्म शुद्धि होने पर प्रकाश रूप में इस अहंकार-पुरूष (Ego-Soul) की झलक मिलती है जो सतपुरूष का छाया रूप है। श्री अरविन्द ने इसे अन्तर्मानसिक या चैत्य पुरूष

(Psychic being) का अनुभव कहा है, कर्म-पुरूष (Lord of works) कहा है। राधास्वामी पंथ में इसे काल और माया का खेल कहा गया है। आन्तरिक अनुभव की दष्टि से ऐसा प्रतीत होता है जैसे संसार के लगभग सभी धर्म इस अवस्था पर आकर अटक गए हैं। सतपुरूष के इसी छाया रूप के अन्दर मंजिल की तलाश कर रहे हैं और इसी के साक्षात्कार को ज्योतिस्वरूप ब्रह्म कह कर उसे मुक्ति दाता मान लिया गया है।

दूसरा रास्ता इसके विपरीत आध्यात्मिक मार्ग है जिसमें व्यक्ति पूरी तरह से ठहर जाना चाहता है। जिसमें आत्मा पूर्ण रूप से एकांत में सिमट जाना चाहती है, समस्त जीवन को अपने अन्दर खींच लेना चाहती है। यह मार्ग संसार से उदासीनता का मार्ग है। इसमें व्यक्ति संसार से दूर, फैलाव और बदलाव से दूर भाग जाना चाहता है। जंगलों में शरण ले लेता है, लेकिन क्या वह संसार से भाग पाता है? वह जहां भी रहे उसके शरीर, मन और उसके चारों तरफ कण-कण व रोम-रोम में हर क्षण बदलाव हो रहा है, कार्य हो रहा है। गीता में श्री कष्ण अर्जुन को कहते हैं कि यदि वे (श्री कष्ण) एक क्षण के लिए भी कर्म करना छोड़ दें तो उसी क्षण प्रलय आ जाएगी, सारी सष्टि की सांस वापिस मुझमें खिंच जाएगी। अतः यह मार्ग कर्म विहीन मार्ग है और कर्म का त्याग करना किसी के लिए भी संभव नही है। सांस लेना, पानी पीना, चलना-फिरना, सोना-जागना इत्यादि सभी कर्म हैं। यह मार्ग बाहर के बदलाव को नजर अंदाज करता है जो संभव नहीं है। यह भी सांसारिक रास्ते की तरह प्रकट होने का परोक्ष रास्ता है जो दूर विरान जंगलों से होकर यहीं पर आ

जाता है। प्रकट न होने की लालसा में भी प्रकट होने की इच्छा छिपी रहती है। क्या महात्मा बुद्ध प्रकट नहीं हुए? क्या महावीर स्वामी प्रकट होने से बच पाए? पहले मार्ग में दूसरों के प्रति हिंसा है तो दूसरे में स्वयं के प्रति। आन्तरिक अनुभव की दष्टि से श्री अरविन्द इसे चैत्य पुरूष के बाद दूसरी सीढ़ी या दूसरा पड़ाव कहते हैं, जो ज्ञान-पुरूष (Lord of Knowledge) या उर्ध्वमन की अनुभूति है।

तीसरा मार्ग अवतार या संत मार्ग है जो आध्यात्मिक होकर भी सांसारिक है। यह मार्ग पहले दोनों मार्गों की पूर्ति करता है। सांसारिक मार्ग में अहंकार के रूप में स्थिति होती है तो अवतार मार्ग में संसार में रहते हुए आत्मा के अन्दर स्थिति होती है जिसे गीता में प्राज्ञस्थिती और ब्रह्मस्थिती कहा गया है। आत्मा के आरोहण (चढ़ाई) की दष्टि से श्री अरविन्द इसे आत्मा की तीसरी और अंतिम सीढ़ी कहते हैं जहां जाकर आत्मा प्रेम-पुरूष (Lord of Love and Devotion) के अन्दर समा जाती है और उसी का रूप बन जाती है। इसे उन्होंने अतिमानसिक (Supermind) अनुभूति कहा है। सांसारिक मार्ग में अहंकार किसी न किसी नाम व रूप को लेकर ठहर जाना चाहता है और जब वह नाम-रूप नष्ट हो जाता है तो वह दूसरे नाम व रूप का सहारा ले लेता है लेकिन अवतार मार्ग में आत्मा को किसी नाम व रूप की बैसाखी की आवश्यकता नहीं पड़ती है। वह स्वयं में इतनी बलवती हो जाती है कि उसका आश्रय लेकर नाम व रूप बनते और बिगड़ते हैं। इतिहास बदल जाता है। जीवन धारा चलती-चलती अपना रूख मोड़ लेती है और नया रूप धारण कर लेती है।

अहंकार का अर्थ है स्वयं को आकार देना। स्वयं को बड़ा या छोटा बनाना, स्वयं को किसी नाम व रूप में बांधना। कभी धन-दौलत के रूप में, कभी जमीन-जायदाद तो कभी बेटे-पोतों के रूप में स्वयं को बांधना ही अहंकार है अर्थात् नाम व रूप का दूसरा नाम अहंकार है। आत्मा का अर्थ है स्वयं का सैल्फ (Self of the Self)। वास्तविक अर्थ में यह सैल्फ भी नहीं है। इसे कोई नाम नहीं दिया जा सकता है। सुविधा के लिए संतों ने आत्मा को दो नामों से पुकारा है-सुरत और निरत। आत्मा की जो शक्ति संसार में रमी (रत) हुई है वह सुरत है और जो संसार में रत होती हुई भी इससे निर्लेप है वह निरत है। यह सभी आकारों में रहती हुई भी निराकार है। निराकार के रूप में स्थित होकर भी साकार की जन्मदात्री है।

अवतार कौन है, प्राज्ञस्थित या पुरूषोतम कौन है? श्री कष्ण कहते हैं कि ऐसा मनुष्य जो तीन गुणों में नहीं फंसता अर्थात् त्रिगुणातीत है, संसार में रहकर भी इनसे निर्लेप रहता है, इन्हें बरतता हुआ भी मुझमें स्थित रहता है वह प्राज्ञस्थित है और पुरूषों में उत्तम है। गुणा गुणेषु वर्तन्ते अर्थात् गुण गणों में बरत रहे हैं यह विचार कर वह देश, काल व निमित्त से ऊपर उठ जाता है। फिर कहते हैं कि ब्रह्म को जानने वाला ब्रह्म में वास करता है - ब्रह्मविद् ब्रह्मणी स्थितः।

ऐसा मनुष्य कर्ता होकर भी अकर्ता है - कर्तारम् अकर्तारम्। यह भी कहते हैं कि वह कार्य करता हुआ भी कोई कार्य नहीं करता है, न वह कर्ता है और न ही कर्मफल के साथ उसका संयोग होता है- न कतवम् न करमाणि सजति न कर्मफल संयोगम्। उसे न पाप छूता है और न ही पुण्य- नादत्ते कस्यचित् पापम् न चैव सुकतम।

वह सभी कार्य परमात्मा के योग में रहता हुआ करता है - युक्तः कतस्नकर्मकत। ज्ञान की प्राप्ति होने पर उसके सभी कर्म और कर्मफल समाप्त हो जाते हैं-सर्वम् कर्माखिलम् ज्ञाने परिसमाप्यते। श्री कष्ण अर्जुन को यह कहकर आमंत्रित करते हैं-मदभावम् आगताः अर्थात् आओ ओर मेरा रूप बन जाओ। श्रद्धा रखने वाले मनुष्यों को यह रूप उपलब्ध होता है -श्रदावान लभते। इस रूप में स्थिति होने के बाद मनुष्य विभक्त होकर भी अविभक्त बना रहता है -अविभक्तम् च भूतेषु विभक्तम् इवा च स्थितम्।

लेकिन केवल बुद्धि में ऐसा सोच लेने से क्या गुणों से निर्लेप हुआ जा सकता है? अहम् ब्रह्मास्मि अर्थात् मैं ब्रह्म हूं - ऐसा कहने से क्या मनुष्य ब्रह्म में स्थित हो जाता है? अयं आत्मा ब्रह्म-यह आत्मा ही ब्रह्म है या अनलहक - मैं खुदा हूँ मात्र ऐसा कहने से क्या व्यक्ति खुदा का रूप बन जाता है। मैं खुदा का पुत्र हूँ, मेरा पिता और मैं एक हैं- ऐसा वचन बोलने से क्या खुदा के साथ योग हो जाता है। ऐसा नहीं है। जिसने भी ऐसे वचन कहे हैं वे लम्बे समय तक परमात्मा को मिलने के लिए तड़फे हैं। उसके साथ अटूट योग में रहे हैं। ऐसा कहने से पहले उन्होंने करनी और रहनी की एक मिसाल कायम की है। लोगों को दिखाने के लिए नहीं बल्कि स्वयं को बदलने के लिए, स्वयं के रूपान्तरण के लिए। ऐसे व्यक्ति परमात्मा के प्रेम और विरह की आग में रातों तड़फते हैं। कबीर साहब के अनुसार -

दुनियां खाए और सोए।
कबीरा जागे और रोए।

वर्षो तक प्रीतम की लौ से लौ लगाई जाती है। मालिक के साथ समग्र रूप से योग किया जाता है। श्री अरविन्द कहते हैं कि सारा जीवन योग है। कबीर साहब इसे और भी गहराई प्रदान करते हुए कहते हैं -

शब्द निरंतर से मन लागा मलिन वासना त्यागी।
उठत बैठत कबहूं ना छूटै ऐसी तारी लागी।।

अन्तर में लगातार शब्द उठ रहा है जो कभी नहीं टूटता। मौलाना रूम और बुल्लेशाह कहते हैं कि हमारे अन्तर में लगातार खुदाई बांग उठती रहती है। मस्जिद में ऊंची आवाज में बांग देना केवल उसकी नकल है, छाया मात्र है। सांवन सिंह जी महाराज और सिक्ख गुरू इसे अकथ कथा कहकर वर्णन करते हैं जो मनुष्य के अन्दर हमेशा चलती रहती है लेकिन आत्मा पर अधिक मैल होने के कारण मनुष्य इस आसमानी आवाज या खुदा के बेहर्फ कलमे को सुन नहीं पाता है।

अतः अहम् ब्रह्मास्मि कहने से पहले मनुष्य को एक लम्बी प्रक्रिया से होकर गुजरना पड़ता है। रूपान्तरण की भूमि तैयार करनी होती है। शरीर और मन में क्रियात्मक बदलाव होता है। यह मात्र शारीरिक ओर मानसिक बदलाव नहीं बल्कि जैविक रूपान्तरण है, बायोलोजिकल फिनोमिना है, हारमोनल ट्रांसफोर्मेशन है। आत्मिक बदलाव है। गुनाहों से भरा हुआ व्यक्ति क्या शंकराचार्य की तरह अहम् ब्रह्मास्मि कह सकता है? क्या वह मंसूर की तरह अनलहक और जीसस की तरह मैं खुदा का पुत्र हूँ ऐसा विश्वास के साथ कह सकता है? जो अपने इष्ट के साथ मन, वचन, कर्म और आत्मा से एक हो गया है वही ऐसा ऐलान कर सकता है।

अवतार का वास्तविक आध्यात्मिक आधार क्या है? यह आन्तरिक अनुभव का विषय है। गीता के 15वें अध्याय में कहा गया है कि इस लोक के चराचर जीवों में और ज्ञान में जो उत्तम है वह पुरूषोतम है, अवतार है-अतोस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरूषोतमः। श्री अरविन्द के अनुसार जब व्यक्ति के अन्दर परमात्मा की दिव्य शक्ति का अवतरण हो जाता है और वह परमात्मा का पूर्ण यंत्र बन जाता है, वह अवतार है। शास्त्रों के अनुसार जिसने साधारण व्यक्ति से अधिक अनुभव के दर्जे पार किए हैं वह अंशावतार या पूर्ण अवतार है। श्री राम 12 कला अवतार थे और श्री कष्ण 16 कलाओं से भरपूर थे। साधारण मनुष्य के अन्दर 6 कलाएं होती हैं। जिसके अन्दर 8 कलाएं मौजूद हैं वह साधारण व्यक्ति से श्रेष्ठ है और जिसके अन्दर 10 या इससे अधिक कला होती हैं वह अवतार के दर्जे में आ जाता है। श्री राम सूर्य अवतार थे और श्री कष्ण चन्द्र अवतार के रूप में जाने जाते हैं।

सूर्य और चन्द्रमा की ये कलाएं आन्तरिक अनुभव की सूक्ष्म अवस्थाएं हैं। हमारे अन्दर ऊर्जा की अलग-अलग तह हैं। हर तह का जो केन्द्र बिन्दु है वह उस तह के कार्य को संचालित करता है। इस प्रकार हमारे स्थूल शरीर में 6 ऐसे केन्द्र बिन्दू हैं जहां से शरीर की 6 प्रणालियां या सिस्टम कार्य कर रहे हैं। ये सारे सिस्टम एक दूसरे के साथ जुड़े हुए हैं और एक दूसरे पर निर्भर करते हैं। तांत्रिक योग कहता है कि हमारे इस स्थूल शरीर में 6 चक्र या कंवल हैं, ऊर्जा के केन्द्र हैं और हर चक्र के मध्य में सूर्य और चन्द्रमा विद्यमान हैं जो उस मण्डल को शक्ति

प्रदान करते हैं। ये 6 ऊर्जा के मण्डल या तह स्थूल शरीर में हैं और छः-छः मण्डल ही सूक्ष्म और कारण शरीर के हैं। इसी आधार पर यह पूरा ब्रह्माण्ड भी बंटा हुआ है- यत् पिण्डे तत् ब्रह्मण्डे और हर मण्डल या चक्र पर सूर्य और चन्द्रमा अपनी-अपनी शक्ति के साथ मौजूद हैं।

उदाहरण के तौर पर शरीर में नीचे से दूसरा चक्र इन्द्री चक्र है जिसे स्वाधिष्ठान भी कहा जाता है, जहां से प्रजनन या औलाद पैदा करने का कार्य संचालित होता है। यहां पर इन्द्र और सष्टि के रचयेता ब्रह्मा का वास कहा गया है। यह चक्र हर व्यक्ति को जाने-अनजाने एक चक्रवात की तरह घुमा रहा है लेकिन जिस व्यक्ति के अन्दर इस ऊर्जा की कमी होती है और यदि वह समय पर जागत नहीं होती है तो उस व्यक्ति को अधूरा माना जाता है। चेतना के विकास के लिए शरीर की हर तह आंशिक या पूरी तरह से खुलनी आवश्यक है। शरीर के छः केन्द्रों में से किसी भी केन्द्र की ऊर्जा यदि नहीं खुलती है तो वह व्यक्ति अंगहीन होता है। यदि सूक्ष्म (मानसिक) और कारण (आत्मिक) शरीर में किसी प्रकार की कमी है तो वह व्यक्ति निश्चित तौर पर विकलांग होता है। किसी भी केन्द्र की ऊर्जा का दुरूपयोग व्यक्ति के विचार और यहां तक कि औलाद में भी अंगहीनता ला सकता है।

शरीर के हर केन्द्र पर गर्मी और ठण्ड के बिन्दू भी होते हैं जिनके उत्तेजित और क्रियाशील होने पर शरीर में गर्मी और शीतलता आने लगती है। यही सूर्य और चन्द्रमा के बिन्दू हैं। ध्यान द्वारा कुण्डलीनी शक्ति के जागरण से ये केन्द्र क्रियाशील हो

जाते हैं तथा सूर्य और चन्द्रमा के रूप में साधक को इनका साक्षात्कार होता है। उसी के अनुसार शरीर में भी गर्मी और ठण्डक का अनुभव होता चलता है। साधारण व्यक्ति केवल दो चक्रों की ऊर्जा को ही मुख्य रूप में अनुभव कर पाता है, वे हैं इन्द्री चक्र और आज्ञा चक्र (दोनों आंखों के मध्य में जहां नरवस सिस्टम या नाड़ी प्रणाली जुड़ी हुई है)। हर व्यक्ति अनुभव करता है कि जब इन केन्द्रों की ऊर्जा में उत्तेजना या उतार-चढ़ाव पैदा होते हैं तो शरीर में भी गर्मी व ठण्डक पैदा होती है। जब काम अंग उत्तेजित होता है या कोई कामी किसी कामिनी के विरह में तड़फता है तो उसका शरीर तपने लगता है और जब काम-वासना की पूर्ति हो जाती है तो शरीर में चन्द्रमा की शीतलता उतरती है जो शरीर को ठण्डक प्रदान करती है। इस प्रकार हर चक्र पर अभ्यास करने से यह अनुभव किया जा सकता है। केवल सूर्य और चन्द्रमा ही नहीं बल्कि सारे ब्रह्माण्ड का नक्शा सूक्ष्म रूप से इन 18 चक्रों (स्थूल, सूक्ष्म और कारण) पर विद्यमान है। हर चक्र का विज्ञान इतना विशाल है कि सदियों तक खोज करने के बाद भी उसका रहस्य पाना कठिन है। इसलिए राधास्वामी पंथ के अनुसार नीचे के 6 चक्रों पर ध्यान करना उचित नहीं माना गया है। क्योंकि ये स्थूल चक्र हैं।

अध्यात्म भी इन्द्री चक्र के इर्द-गिर्द घूमता रहता है। तांत्रिक योग और शाक्त (शक्ति) सम्प्रदाय तो इसी चक्र पर आधारित हैं। इनमें औरत को शक्ति का प्रतिनिधि मानकर उसकी विधिपूर्वक पूजा की जाती है और उसके साथ गहराई से प्रेम किया जाता है जिसमें तन और मन का भी होश ना रहे। जब दोनों

अंतरंग रूप से एक हो जाते हैं तो वहां परमात्मा के मातशक्ति (Mother Force) के रूप में दर्शन होते हैं। पुरूष ने जब भी औरत को सहयोगी बनाकर अध्यात्म की खोज की है उसने परमात्मा को मातशक्ति के रूप में पाया है और उसी के अनुसार उसका वर्णन किया है। ओशो का दर्शन पूर्ण रूप से इसी चक्र के चारों ओर घूमता रहा है। उन्होंने नए-नए प्रयोगों द्वारा शक्तिपात करने के कई उपाय बताए हैं। उनके नजरिए के अनुसार परमात्मा को यदि मां कहा जाता तो अधिक उचित होता। उन्होंने अपने दर्शन में शक्ति सम्प्रदाय को ही नए रूप में प्रस्तुत किया है। श्री अरविन्द और रामकष्ण परमहंस का दर्शन भी मातशक्ति पर आधारित है।

शरीर में अलग-अलग स्थान पर भिन्न-भिन्न चक्र हैं। हर चक्र पर अलग-अलग रंग के सूर्य और चन्द्रमा हैं। अलग-अलग चक्रों पर अलग-अलग सौर मण्डल अपनी आभा के साथ विराजमान हैं। यदि ध्यान में साधक की उन्नति होती जाती है तो वह इन सबका साक्षात्कार करता चलता है। कोई जानकार शब्द-भेदी मार्गदर्शक यह भेद बता सकता है।

अवतार कौन है? स्पष्ट है कि जिसने सूर्य और चन्द्रमा की सारी कलाओं को आत्मसात कर लिया है, उनका अनुभव कर लिया है वह पूर्णावतार है और जिसने अंश रूप में इन्हें अपने अन्दर प्रकट किया है वह अंशावतार है। हिन्दू धर्म में राम और कष्ण को ही पूर्णावतार माना गया है। इनसे पहले के जितने भी अवतार हुए हैं-मच्छ, कच्छ, वराह, नरसिंह, वामन और परशुराम सभी के अन्दर पशु या जंगली व्यक्ति के गुण हैं इसलिए ये अंशावतार कहे गए हैं।

पिछले अवतार के जाने के बाद जब अवतार की अगली अवस्था आती है तो पिछले के गुण को साथ लेकर ही आती है। उदाहरण के तौर पर मछली पानी के जीवों में उत्तम है लेकिन वह केवल पानी में ही चल फिर सकती है। मच्छ (मछली) के बाद कच्छ (कछुआ) अवतार के रूप में आता है। कच्छ के अन्दर मच्छ के गुण भी हैं अर्थात् वह पानी में चलने के साथ-साथ पथ्वी पर भी चल-फिर सकता है। इसके बाद वराह (सुअर) अवतार के रूप में प्रकट होता है जो अपनी एकाग्रता के लिए जाना जाता है, जंगली सुअर के सामने जो भी आ जाता है वह उसी को फाड़ डालता है। वराह गन्दगी में घूमता है, कीचड़ पंसद करता है अतः इसके अन्दर मच्छ और कच्छ दोनों के गुण विद्यमान हैं। वराह के बाद नरसिंह आता है। नरसिंह अर्थात् आधा पशु और आधा व्यक्ति जिसके अन्दर वराह (पशु) और मनुष्य दोनों के गुण मौजूद हैं। इसी तरह तरतीब से वामन (बौना मनुष्य), परशुराम, राम, कष्ण और बुद्ध अवतार के रूप में प्रकट हुए। विकास का सिद्धांत प्रतिपादित करने वाले वैज्ञानिक डारविन ने कहा है कि हिन्दुओं के दस अवतारों की कहानी पथ्वी पर जीवन के विकास की कहानी मालूम पड़ती है।

सूर्यवंशी कौन है? चन्द्रवंशी कौन है? जिसने अपने अन्तर में सूर्य और चन्द्रमा की सारी कलाओं को आत्मसात कर लिया है वही सूर्यवंशी और चन्द्रवंशी है। जिसने अन्दर के सभी चक्रों को ध्यान-अभ्यास के द्वारा भेदन कर लिया है वह पुरूषों में उत्तम पुरूषोतम अर्थात् पूर्णावतार है। ऐसा अवतार जो सूर्यवंशी होते हुए चन्द्रवंशी भी होता है, जब प्रकट होता है तो लोग उसे

पहचान नहीं पाते हैं क्योंकि वह स्वयं को प्रकट नहीं करता है। जब वह बोलता है तो ऐसा लगता है कि यह व्यक्ति सत्य कह रहा है लेकिन यदि इसकी बातों को सही मानते हैं तो हम सभी गलत हो जाते हैं। ओशो कहते हैं कि सांसारिक लोगों ने अपना व्यापार, अपना पैसा, अपनी इनवेस्टमैंट घाटी में कर रखी है, अपना महल बालू रेत पर खड़ा कर रखा है, पुल के ऊपर बसासत कर रखी है जो केवल आने जाने के लिए मात्र एक रास्ता है और जब ऐसा व्यक्ति ये बातें हमें बताता है तो हमारे झूठे अस्तित्व और हमारे द्वारा की गई सारी इनवेस्टमैंट के लिए खतरा पैदा हो जाता है जिसे हम सहन नहीं कर पाते हैं और उस व्यक्ति को झूठा करार देने लगते हैं। दिल की गहराइयों से जानते हैं कि यह व्यक्ति सत्य कह रहा है लेकिन जर्मनी का तानाशाह हिटलर कहता था कि यदि एक झूठ को बार-बार दोहराया जाए तो वह सत्य बन जाता है और दुनियां वाले उसे ही सत्य मानते लगते हैं। जब ऐसा पुरूष आता है तो कोई भी व्यक्ति उसकी रेडियेशन से अछूता नहीं रह सकता है और संसार दो भागों में बंटता चला जाता है। उसकी रफ्तार बहुत तेज होती है। जो व्यक्ति पिछली मूढ़ धारणाओं को छोड़ कर उसके साथ हो लेते हैं वे आगे बढ़ते जाते हैं लेकिन जो व्यक्ति उसकी उंगली नहीं पकड़ पाते हैं और पुरानी लकीरों को पीटते रहते हैं वे पिछड़ जाते हैं और उसके ऊपर उंगली उठाने लगते हैं कि यह व्यक्ति झूठा है, इसने हमारा सारा व्यापार, हमारे पूर्वजों की सारी धारणाएं ध्वस्त कर दी हैं। यही कारण है कि जिसने भी सच्चाई

कहने का प्रयत्न किया उसी को सताया गया, जहर देकर मार दिया गया। सूली पर चढ़ा दिया गया और तरह-तरह के कष्ट पहुंचाए गए लेकिन उसके जाने के बाद उन्हीं लोगों ने अपनी इच्छानुसार उसका चेहरा लीप-पोत दिया और उसके नाम पर ऐसा व्यापार होने लगा जिसने धर्म की जड़ें हिला दी। आज धार्मिक बनकर धर्म को लूटा जा रहा है। धर्म की आड़ में पैसे और राजनीति का खेल खेला जा रहा है। गुरूओं के चारों ओर हथियारबंद प्राणरक्षकों की सेना खड़ी हो गई है। साधारण व्यक्ति के मन में परमात्मा की तस्वीर इतनी छोटी कर दी गई है और वह सोचने पर मजबूर हो गया है कि क्या परमात्मा इन्हीं गुरूओं का मोहताज हो गया है। लोगों की भीड़ की इस बहती हुई बाढ़ में यदि कोई व्यक्ति सच्चाई बोलने की कोशिश करता है तो वह भी उस धार के दबाव को सहन नहीं कर पाता है और मजबूर हुआ भीड़ में बहता चला जाता है। यह एक चुनौती पूर्ण कार्य है लेकिन समय की मांग समय के दरवाजे पर दस्तखत दे रही है।

इस चुनौती को वही पुरूष स्वीकार कर सकता है जिसने अपने अन्तर में सूर्य और चन्द्रमा की सारी कलाओं को आत्मसात कर लिया है, जिसके अनुभव की जड़ें इतनी गहरी हों कि वे अस्तित्व की धार में भी पैर जमा कर खड़ी रह सकें ताकि फिर कोई जीसस सूली ना चढ़ सके या फिर किसी सुकरात या दयानन्द को जहर का प्याला पीने के लिए मजबूर ना होना पड़े।

सूर्य की 12 कलाएं कही गई हैं और चन्द्रमा की सोलह। कौन सी हैं ये कलाएं? हिन्दू ज्योतिष के अनुसार सूर्य बारह राशियों में

संक्रमण करता है। एक राशि के साथ लगभग एक महीने तक योग रखता है, इस तरह साल में बारह महीने होते हैं। सूर्य जब विशेष राशियों में पहुंचता है तो एक निश्चित ऋतु मानी जाती है जैसे - बसन्त (मीन, मेष), ग्रीष्म (वष, मिथुन), वर्षा (कर्क, सिंह), शरद् (कन्या, तुला), हेमन्त (वश्चिक, धनु) और शिशिर (मकर, कुम्भ)। बारह राशियों में घूमने के बाद ही सूर्य का एक चक्कर पूरा होता है और सभी ग्रहों के साथ एक विशेष योग बनता है। मनुष्य के शरीर में भी इन राशियों का विशेष स्थान माना गया है- मेष(सिर), वष (मुख), मिथुन (स्तन या छाती), कर्क (हृदय), सिंह (पेट), कन्या (कमर), तुला (वस्ति, पेडू), वश्चिक (लिंग), धनु (जांघ), मकर (दोनों घुटने), कुम्भ (पिण्डलियां), और मीन (पैर)। अलग-अलग राशियों का अलग-अलग ग्रहों के साथ सम्बन्ध भी माना जाता है - सूर्य (सिंह), चन्द्रमा (कर्क), मंगल (मेष, वश्चिक), बुध (मिथुन, कन्या) बहस्पति (धनु, मीन), शुक्र (वष, तुला) और शनि (मकर, कुम्भ)।

जो सूर्य का पूर्ण अवतार है, इसका अर्थ यह है कि ऐसे व्यक्ति का सभी ग्रहों के साथ पूर्ण शुभ योग होता है। ग्रहों का सम्बन्ध विद्या, बुद्धि, ज्ञान, शक्ति, धन, औलाद, मित्र, रिश्तेदार, आदर, सम्मान, मन, शरीर, नाक, कान, पाचन क्रिया, हृदय गति आदि से माना गया है और जिसके अन्दर सभी गुण उचित अनुपात या उन्नत अवस्था में मौजूद हों वह व्यक्ति स्वतः ही साधारण मनुष्य से ऊंचा उठ जाता है। उसकी चाल को कोई मानवीय या प्राकतिक शक्ति नहीं रोक सकती है। ऐसा व्यक्ति साल के बारहों महीने अविजित रहता है। हमेशा सूर्य की तरह चमकता रहता है

क्योंकि वह अपनी सभी बारह अवस्थाओं में मजबूत रहता है लेकिन प्राकतिक व्यवस्था के अन्दर रहते हुए पूर्ण रूप से ऐसा होना संभव नहीं है और न ही उचित है क्योंकि सर्वसमर्थ पुरूष को ऊंचा अनुभव प्राप्त करने के लिए जीवन की कठिन परिस्थितियों में से निकलना ही होता है।

भगवान कष्ण को चन्द्र अवतार कहा गया है। पथ्वी के निकट होने के कारण मानव जीवन पर चन्द्रमा का प्रभाव सबसे अधिक माना गया है। चन्द्रमा 16 कलाओं में से होकर गुजरता है। पूर्णमासी के दिन वह पूरा बलवान होता है। पूर्ण कला भरपूर होता है। पंद्रह दिन तक हर रोज एक-एक कला घटता चला जाता है और सोलहवें दिन अर्थात् अमावस्या के दिन वह पूर्ण लोप हो जाता है, उसका प्रभाव लुप्त हो जाता है। उसकी गति सूर्य के साथ-साथ होने लगती है। इसी प्रकार जब उसकी यात्रा अमावस्या से आरम्भ होती है तो पूर्णमासी तक वह एक-एक कला आगे बढ़ती जाती है।

भारतीय मनीषियों ने स्थूल सूर्य और स्थूल चन्द्रमा को आधार बनाकर कलाओं का वर्णन किया है लेकिन सुरत-शब्द योग में इन कलाओं को अन्तर में प्रकट किया जाता है। बाहर का सूर्य ज्योतिष विद्या के अनुसार बारह अवस्थाओं में से होकर गुजरता है लेकिन अन्दर में बारह सौरमण्डल पार किए जाते हैं जिनका वर्णन कबीर साहब के अतिरिक्त कुछ ही संतों ने किया है। हर सौर मण्डल में चन्द्रमा अपनी सभी कलाओं के साथ विद्यमान है। सूर्य और चन्द्रमा की ये कलाएं गर्भ के अन्दर से जन्म नहीं लेती अर्थात् जन्म से नहीं मिलती बल्कि प्रेम, विरह, ज्ञान और अभ्यास के द्वारा इन्हें प्रकट किया जाता है। न ही ये

कलाएं अपनी औलाद या रिश्तेदारों को ट्रांसफर की जा सकती हैं। इनका ग्राहक कोई बिरला ही होता है। जिस व्यक्ति ने अन्दर के सूर्य और चन्द्रमा की सभी अवस्थाओं को पार कर लिया है वास्तव में वही सूर्यवंशी और चन्द्रवंशी है। वही सतपुरूष का अवतार है। जो व्यक्ति अंधकार में रहता है या किसी समय प्रकाश में गया है और अब उसकी स्थिति अंधकार में है तो वह व्यक्ति अवतार नहीं सिद्ध पुरूष अवश्य हो सकता है।

इन कलाओं से भरपूर व्यक्ति को पथ्वी पर युद्ध करने की आवश्यकता नहीं पड़ती है। वह तो प्रेम और दया का सागर होता है। वह पापी को नहीं बल्कि पाप को खत्म करने की शिक्षा देता है। अपने हृदय की विशालता और प्रेम से पापी और गुनहगारों को सही रास्ते पर लाने का प्रयत्न करता है। परमात्मा के अवतार का व्यवहार क्रूरता और युद्ध का व्यवहार कैसे हो सकता है? क्रूरता और दमन का व्यवहार केवल काल के अवतारों का हो सकता हैं लेकिन हिन्दू, यहूदी और दूसरे धर्मों में उसे ही मसीहा या अवतार कहा जाता है जो अपनी कौम के उद्धार के लिए बल का प्रयोग करता है, जिसके हाथ में सदा हथियार रहता है। मनुष्य की प्रवति हमेशा युद्ध करने और दूसरे पर अधिकार करने की रही है अतः जिसके अन्दर भरपूर मात्रा में ऐसे गुण हों उसे ही अवतार की संज्ञा दी जाती है। ऐसा तथाकथित अवतार या उद्वेलित मनुष्य केवल माता-पिता के उद्वेलित मन की संतान ही हो सकता है।

अवतार किन परिस्थितियों में पथ्वी पर जन्म लेता है? गीता कहती है कि जब पथ्वी पर धर्म की हानि होती है और अधर्म की जीत

होती है तो परमात्मा का अवतरण होता है। दूसरे शास्त्र कहते हैं कि जब पथ्वी पर पापी और अधर्मी लोगों का भार बढ़ जाता है तो पथ्वी गाय के रूप में ब्रह्मा के पास जाती है और मदद के लिए पुकार करती है तब परमात्मा पथ्वी का भार हल्का करने के लिए अवतार के रूप में जन्म लेते हैं। श्री अरविन्द श्रीमद्भगवद् गीता के विचार से सहमत हैं जिसका वर्णन उन्होंने 'एसेज आन द गीता' में खोलकर किया है। राधास्वामी पंथ के संत महर्षि शिवव्रत लाल ने 'मांग और पूर्ति' के नियम के अधीन इसे स्वीकार किया है। वे कहते हैं कि जब कोई मांग पथ्वी से दढ़ता के साथ उठती है और लम्बे समय तक उसका विचार तपता है तो कुदरत को उसकी पूर्ति करनी ही पड़ती है। इस ब्रह्माण्ड में हर प्रश्न का उत्तर मौजूद है लेकिन जब तक विचार या संकल्प में कमजोरी है तब तक उसकी पूर्ति भी अधूरी ही आती है। इसी आधार पर कोई मनुष्य जीवन में सफल होता है और कोई असफल। अतः पथ्वी से जब कोई मांग उठती है, किसी उद्धारक या सुधारक के लिए दढ़ पुकार उठती है तो पथ्वी अपनी परिक्रमा के समय जिस ग्रह के निकट और सामने होती है उसी ग्रह या नक्षत्र के गुण लेकर कोई महापुरूष जन्म लेता है और दीन-हीन की सहायता करता है। ग्रह और नक्षत्रों का विज्ञान कहता है कि जो ग्रह पथ्वी के निकट आने लगता है उसके गुणों के अनुसार पथ्वी के जीवन पर उसका प्रभाव बढ़ता है और सुख-दुःख घटते या बढ़ते हैं। वैसी ही मांग उठती है और उसी के प्रभाव को लेकर बच्चों का जन्म होता है। ऊपरी विवेचन से यह स्पष्ट है कि सभी सिद्धांतों के आधार में 'मांग व पूर्ति' का नियम अवश्य कार्य करता है और वैज्ञानिक दष्टि से भी यह उचित है।

किसी साधारण माता के गर्भ से अवतार या पुरूषोतम का जन्म नहीं हो सकता है। अवतार के जन्म के लिए प्रकति माता अपने नियम व तरीके के अनुसार प्रबंध करती है। अवतार पुरूष बहुत ऊंचे स्तर से और गहरी चेतना को लेकर आता है अतः ऐसी माता जिसे अपने तन और मन की सुध नहीं है, या तो वह अपने इष्ट के प्यार में स्वयं को भूल गई है या परिस्थितिवश वह इतने भारी दुःख में रहती है कि उसे अपने तन मन की सुध नहीं है और गहन उदासी में रहते हुए भी उसे परमात्मा की सच्चाई पर अटल विश्वास है अर्थात् जो माता साधारण चेतना के स्तर को पार करके विशेष चेतना की गहराइयों में अखण्डित होकर दढ़ विश्वास के साथ उतर गई है वही माता अवतार अवतरण के लिए गर्भ प्रदान करती है। जो माता उदासी में जीती है उसे यह ज्ञान नहीं होता है कि उसके गर्भ से कोई महापुरूष जन्म लेने वाला है। मेरे सद्गुरू की माता को तीन-तीन दिन तक खाना नहीं मिलता था। घर में ऐसी हालत थी कि उन्हें स्वयं दो-दो, तीन-तीन दिनों तक भूखा रहना पड़ता था। जब उनका जन्म हुआ तो माता को उनके जन्म के तीन दिन बाद थोड़ा दलिया खाने को मिला। घर में दादा-दादी थे जिन्होंने उनका पालन-पोषण किया। बचपन में दादी ऐसी शिक्षाप्रद कहानियां सुनाती थी जिनको सुनकर उनके अन्दर सोई हुई आध्यात्मिक चिंगारी जाग उठी। समाज और जाति-पाति के थपेड़ों से वही चिंगारी उनके अन्दर ब्रह्म-अग्नि बनकर जलने लगी जिसने देश-विदेश के अनेक लोगों को प्रभावित किया।

जो माता अपने इष्ट के प्रेम और आनंद में मस्त रहती है और जिसने आध्यात्मिक मंजिलें तय कर ली हैं, उसे यह ज्ञान रहता है कि उसके गर्भ से कोई ऊंची आत्मा जन्म लेने वाली है। उसे गर्भ से ही उसके स्वप्न आने लगते हैं। बच्चा गर्भ में ही माता-पिता से बातें करने लगता है और अपने भावी जीवन के संकेत दे देता है। महात्मा बुद्ध और महावीर स्वामी इसके उदाहरण हैं।

जो माता दुःख और उदासी में जीवन व्यतीत करती है उसकी संतान को भी जीवन में बहुत संघर्ष करना पड़ता है, उसे बहुत लम्बा रास्ता तय करना पड़ता है। यद्यपि उदासी और मानसिक तनाव का जीवन शरीर के लिए अत्यंत हानिकारक है लेकिन जमीन से उठने वाले किसी भी सफल व्यक्ति को मानसिक तपस्या से गुजरना ही पड़ता है तभी जाकर अनुभव की परतें खुल पाती हैं। उदासी भी एकाग्रता का दूसरा नाम है, यह समाधि की एक अवस्था है जिसमें व्यक्ति सब कुछ भूलकर एक ही बिन्दू पर गहराता चला जाता है। कन्सन्ट्रेटिड और इन्टिग्रेटिड होता चला जाता है। हर समय सोते-जागते, उठते-बैठते उसके मन की बैठक उसी बिन्दु पर बनी रहती है। ऐसे व्यक्ति के लिए कुछ क्षण ऐसे भी आते हैं जब वह विचारों की सीमा को पार करने लगता है, निर्विचार होने लगता है, बेसुधी की अवस्था आने लगती है, विचार शुन्यता बढ़ने लगती है। वह व्यक्ति चेतना की गहराई में उतरता चला जाता है, उसका व्यक्तिगत अहंकार खोता चला जाता है और जब व्यक्तिगत अहंकार विलीन होता है तो उसका सहारा परमात्मा या अस्तित्व

बनता है। वह उसके दर्द को बांटता है, अन्दर से शक्ति और शांति प्रदान करता है और जब उदासी के साथ-साथ अपने इष्ट या सदगुरू का प्रेम भी उफान पर आ जाए तो आत्मा की शक्ति दो धारी तलवार के समान हो जाती है। ऐसी अवस्था तभी हो सकती है जब हर तरफ से मनुष्य का सहारा टूट जाता है और उसे केवल परमात्मा का आश्रय नजर आता है। द्रोपदी को जब भरी सभा में नंगा किया जा रहा था तो वह कभी पितामह को सहायता के लिए पुकारती तो कभी धतराष्ट्र को। कभी गुरू द्रोण को पुकारती तो कभी विदुर और पाण्डवों की तरफ दौड़ती, लेकिन जब उसकी दुःख भरी पुकार किसी ने नहीं सुनी तो वह निराश्रय होकर परमात्मा के चरणों में गिर पड़ी तब परमात्मा को श्री कष्ण के रूप में सहायता के लिए आना ही पड़ा। सदगुरू ताराचन्द जी महाराज कहते थे कि यदि भक्त परमात्मा को पूरी तरह समर्पित हो जाए तो परमात्मा भक्त के आगे-आगे नाचता है और उसकी हर इच्छा की पूर्ति करता है। कबीर साहब भी यही कहते हैं कि जब भक्त का मन निर्मल हो जाता है तो परमात्मा ऐसे भक्त के प्यार के लिए तड़पता है :

कबीर मन निर्मल भया जैसे गंगा नीर।
पीछे-पीछे हरि फिरै कहत कबीर-कबीर।।

महर्षि शिव्रतलाल कहते हैं कि बच्चा माता-पिता का संकल्प होता है। माता-पिता के जैसे विचार होते हैं उनके अन्दर वैसे ही विचारों का संकल्प आकार धारण करने लगता है और वही संकल्प फिर मां के गर्भ में काया बनकर स्थिर हो जाता है तथा बच्चे के रूप में जन्म लेता

है। मन में किसी भी तरह का विचार जितना अधिक तपता है, उतनी ही अधिक संकल्प में ताकत आने लगती है और विश्वास मजबूत होने लगता है। मन की बिखरी हुई ताकत एक होने लगती है, इन्टिग्रेटिड होने लगती है और उसी तरह के परिणाम देने लगती है। यही कारण है कि बंटा हुआ या द्वैत में जीने वाला व्यक्ति हमेशा बिखरा रहता है और जीवन में भी सफलता के लिए तरसता रहता है।

शास्त्र ऐसी कहानियों से भरे पड़े हैं जिनमें ऋषि-मुनि, देव या दैत्यों ने किसी कामना की पूर्ति के लिए तपस्या की और अपने इष्टदेव से वरदान प्राप्त किए। संतान प्राप्ति के लिए, स्वर्ग का राज्य प्राप्त करने के लिए या ताकतवर बनने के लिए अनेकों बार अनेक व्यक्तियों द्वारा वर्षो तक तप किए गए। तपस्या संकल्प की मजबूती के लिए की जाती है। तप और भक्ति से ख्याल में मजबूती पैदा होती है फिर वही ख्याल अन्तर में एक रूप लेकर उभरने लगता है और अन्त में कर्म में परिवर्तित हो जाता है।

जब कोई व्यक्ति मकान बनाना चाहता है या कोई व्यापार करना चाहता है तो सबसे पहले उसके मन में कार्य का विचार पैदा होता है। यदि उसके पास साधन नहीं हैं तो वह विचार उसके अन्दर लगातार तपने लगता है और वह व्यक्ति दिन-रात उसी कार्य के बारे में सोचने लगता है। यदि संकल्प में मजबूती बनी रहती है तो स्वतः ही इस कार्य के प्रति उसके मन और शरीर में गतिशीलता पैदा हो जाती है और धीरे-धीरे उस कार्य की पूर्ति के लिए साधन भी पैदा होने लगते हैं और वही विचार या ज्ञान एक दिन कर्म में परिवर्तित हो जाता है।

वास्तव में भक्ति (प्रेम), ज्ञान (विचार) और कर्म अलग-अलग नहीं हैं बल्कि एक ही सच्चाई के तीन भिन्न-भिन्न रूप हैं जैसे भाप, पानी और बर्फ। जब यह रहस्य समझ में आ जाता है तो सष्टि के पैदा होने का कारण भी समझ में आने लगता है।

जब कोई भी महापुरूष दुनियां में आया है तो उसके जन्म के पीछे माता-पिता के संकल्प के अतिरिक्त उसके पूर्वजों का संकल्प और संस्कार भी रहे हैं। यदि श्री राम के जन्म के पीछे उनके पूर्वज राजा हरिश्चन्द्र और भागीरथ जैसे महापुरूषों का पारिवारिक संस्कार था तो श्री कष्ण के पीछे राजा ययाती और शुक्राचार्य की पुत्री देवयानी जैसी आत्माओं का। स्वयं ओशो (आचार्य रजनीश) जो पूर्वज संस्कारों की धज्जियां उड़ाते हैं जैन धर्म के सख्त और भीमकाय नियमों की भूमि पर उनका जन्म हुआ लेकिन समय के साथ उस आधार को भूला दिया गया और कह दिया गया कि तोड़ डालो सभी नियमों को, पूर्व संस्कारों को और ऐतिहासिक परम्पराओं को।

उनके दर्शन से एक तरफ संस्कारों का अवमूल्यन हुआ लेकिन दूसरी तरफ उन्होंने अध्यात्म को नया जीवन भी दिया। अध्यात्म वानप्रस्थ और सन्यास की जीर्ण दीवारों से निकलकर जवान क्षेत्रों में प्रवेश कर गया। लोग भीड़ में चलना चाहते हैं, यौवन का भोग भी नहीं छोड़ना चाहते हैं उनके लिए यह रास्ता अत्यंत उपयुक्त है जिसको नाम दिया गया है -जोरबा टू बुद्धा। यह मार्ग कोई दूसरा ओशो या बुद्धा तो शायद पैदा नहीं कर पाएगा क्योंकि जिस पष्ठभूमि या बैकग्राऊंड को लेकर ओशो का

पथ्वी पर अवतरण हुआ उसे पूरी तरह से नकार दिया गया है, उस पर चलने के लिए मना कर दिया गया है लेकिन यह मार्ग भोग और ऐश्वर्य में डूबे जोरबा को कभी-कभी उसके अन्दर विद्यमान बुद्ध की झलक अवश्य देता रहेगा। इस मार्ग में साधक की अध्यात्म की तरफ चलने की एक तैयारी है लेकिन आन्तरिक अनुभव का अभाव भी है जो साधक को मौत की प्रक्रिया में से गुजरना सिखाता है, जो भीड़ का अनुभव नहीं है और भोग के अन्दर से होकर नहीं गुजरता है बल्कि नितांत एकांत का अनुभव है, पूर्ण तौर पर व्यक्तिगत अनुभव है जिसे स्वयं ओशो भी स्वीकार करते हैं। बुद्धा का रास्ता प्रीतम के विरह की अग्नि में तपती गलियों से होकर गुजरता है जिसमें से व्यक्ति अकेला होकर ही गुजर सकता है।

जितना सच्चा और रहणी से मजबूत जीवन होता है उतनी ही ऊंची आत्मा जन्म लेती है। कच्ची रहणी या बेमेल गर्भ से ऊंची आत्मा नहीं उतरती है। इसके लिए लगातार सच्चा और शुद्ध जीवन जीना पड़ता है। यह कोई आकस्मिक घटना नहीं है।

श्री कष्ण का जीवन उनके माता-पिता देवकी और वासुदेव के विचारों का दर्पण है। उनके विचार और संकल्प का केवल काया रूप में अवतरण है। राजा कंस को मारने वाली पहली या दूसरी संतान भी हो सकती थी लेकिन कष्ण जैसे युगपुरूष का अवतरण केवल गहन और लम्बी तपस्या के बाद ही संभव हो सकता था। उदासीनता और समर्पण की सारी हदें पार करने के बाद ही हो सकता था। जहां सभी आश्रय टूट जाते हैं और केवल परमात्मा का सहारा रह जाता है। श्री कष्ण के जन्म के बारह साल पहले एक दैविक भविष्यवाणी हुई थी कि

देवकी के गर्भ से पैदा होने वाला आठवां पुत्र कंस का वध करेगा। इसलिए कंस ने अपनी बहन देवकी और उसके पति वासुदेव को कैद में डाल दिया और एक-एक करके सभी बच्चों की हत्या करता रहा। देवकी और वासुदेव का ख्याल केवल आठवें पुत्र पर टिका था। कितना दर्दनाक रहा होगा माता-पिता के लिए अपने बच्चों की अपनी आंखों के सामने लगातार हत्या होते हुए देखना? कंस द्वारा की गई निर्मम हत्याओं ने देवकी-वासुदेव की चेतना की जड़ों को हिला कर रख दिया और दिल की गहनतम उदासियों में धकेल दिया। कुदरत का यह एक क्रूरतापूर्ण प्रबंध था लेकिन कंस के पापों से निजात दिलाने के लिए और ऊंची आत्मा के अवतरण के लिए यह आवश्यक भी था। कंस का वध और आठवें पुत्र को जन्म देने की आशा के ऊपर वासुदेव और देवकी का जीवन टिका हुआ था। बारह वर्ष तक एक ही ख्याल तपता रहा। जब उस ख्याल या विचार की पकाई हुई तो वही ख्याल कष्ण का रूप लेकर स्थूल रूप में प्रकट हुआ।

विचार ने शरीर धारण किया। इतने अटूट और दढ़ विचार की हत्या हो जाए, यह संभव न था। सब कुछ कुदरत के नियम के अनुसार हुआ लेकिन यदि कंस के भय से पुत्र को जन्म देने के विचार की मत्यु हो जाती तो जन्म के बाद बच्चे की मत्यु भी संभव थी, चाहे स्वयं भगवान ही जन्म लेकर क्यों न आए। प्राकतिक नियम सबके लिए समान हैं। इतना अवश्य है कि कुदरत को जिस मनुष्य से विशेष कार्य लेना होता है वह उसे उसी के अनुसार संस्कार देकर और कवच पहनाकर भेजती है और निर्धारित कार्य को पूर्ण करती है। इसलिए परमात्मा या परम् पुरूष भी नियम के

अधीन होकर ही जन्म लेते हैं। ख्याल से ही मनुष्य बिमार हो जाता है और ख्याल मात्र से ही स्वस्थ होने लगता है। मेरे सद्गुरू कहते थे कि औलाद यदि नालायक है तो उसमें औलाद का कोई दोष नहीं है, उसके लिए मां-बाप के विचार स्वयं जिम्मेदार होते हैं।

देवकी और वासुदेव ने बारह वर्ष तक कैद में रहते हुए हर क्षण एक ही विचार को तपाया, वह था-राजा कंस का वध। राजा अर्थात् राजनीति और छल की नीति। कंस अर्थात् बुराई या छल के साथ योग। वध अर्थात् जीवन घात, युद्ध की शुरूआत। कहने का तात्पर्य यह है कि देवकी और वासुदेव ने जाने-अनजाने या विधि के विधान के अनुसार प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से ऐसे पुत्र की कामना और चुनाव किया था जिसके अन्दर राजनीति, छल और युद्ध की प्रवति के साथ-साथ बुराई पर विजय प्राप्त करने के गुण हों। इन्हीं गुणों के कारण कुछ लोग कष्ण महाराज को पूर्ण अवतार मानते हैं, सोलह कला भरपूर कहते हैं। संस्कारों के अनुरूप ही श्री कष्ण ने अपने जीवन में इतने युद्ध किए जितने शायद ही किसी राजा ने किए हों और इनमें छल-बल और राजनीति का भरपूर प्रयोग किया गया। महाभारत के युद्ध में कौरवों का एक भी योद्धा ऐसा नहीं था जिसका वध उन्होंने छल से ना किया हो। वे स्वयं भी आजीवन युद्ध करते रहे और अंत समय में उनका सारा कुल आपस में लड़ते हुए विनाश को प्राप्त हुआ। इसलिए संत मत या कबीर मत में दस अवतारों को दयाल का नहीं बल्कि काल का अवतार कहा जाता है क्योंकि दयाल का अवतार कभी किसी की हत्या नहीं करता है, युद्ध का आह्वान नहीं करता है। जैन धर्म की मान्यता है कि श्री कष्ण ने इतना जीवन घात किया कि उन्हें मत्यु

के बाद सातवें नर्क में डाल दिया गया। सद्गुरू ताराचन्द जी महाराज कहते थे कि जिस पुरूष या देवता की तुम पूजा करोगे या संग करोगे, उसके अन्दर जैसे गुण होंगे वैसे ही गुण तुम्हारे अन्दर आ जाएंगे।

जीसस का जन्म उनके जीवन की कहानी स्वयं ही कह रहा है। वे मां मरियम के पुत्र थे, उनका जन्म तब हुआ जब वे कुंवारी थी। हिन्दुओं में भी इससे मिलती-जुलती एक कथा प्रचलित है कि पाण्डवों की माता कुंती ने विवाह से पहले सूर्य के साथ एक मंत्र के द्वारा योग किया और सूर्य पुत्र कर्ण को जन्म दिया जिसके समान महाभारत के युद्ध में कोई भी योद्धा नहीं था। वैज्ञानिक दष्टि से ऐसा होना असंभव है लेकिन इतना संभव हो सकता है कि जब कोई औरत किसी देवता या प्राकतिक शक्ति की तन, मन और आत्मा से भक्ति करे और ऐसा करते हुए यदि वह औरत अपने प्रियतम या खाविन्द के साथ पूर्ण समर्पण के साथ प्रेम में उतरे तो ऐसा करने से जो संतान पैदा होगी उसके अन्दर वही गुण होंगे जिनकी कल्पना करके विचार को गति दी गई थी, ख्याल को तपाया गया था। पति-पत्नी या दम्पति जितने अधिक प्रेम, समर्पण और ऊंचे विचारों के साथ भोग में उतरेंगे उतनी ही अधिक ऊंचाई से चेतना के अवतरण की संभावना बढ़ जाती है। इसके साथ-साथ नस्ल की सुन्दरता और ताकत भी बढ़ती चली जाती है। जहां दिल का खुलापन है, प्रेम, सेवा और दूसरों के प्रति समर्पण बढ़ता जाता है वहां अलग ही गुणों वाली पीढ़ी आने लगती है। सिक्ख कौम इसका जीता-जागता उदाहरण है। सिक्खों जैसी सुन्दरता और ताकत आज शायद संसार की किसी कौम में नहीं है। यह रूप की

सुन्दरता नहीं बल्कि दिल की सुन्दरता का एक नमूना है। यह शरीर की ताकत नहीं बल्कि दिल का खुलापन है जो जीवन के हर क्षेत्र में खुल कर प्रकट होने लगा है। जहां दिल संकुचित होने लगता है वहां औलाद का स्वरूप भी सिकुड़ने लगता है और हर तरह की बरकत भी अपने पंख सिकोड़ने लगती है। इसी अन्दाज को देखकर आज से लगभग सौ साल पहले महर्षि शिवव्रतलाल ने कहा था कि सिक्खों के चेहरे पर गुरू का नूर है, इनकी सेवा इनके चेहरे पर उतर आई है, आन्तरिक नूर इनके तन और मन में उतरने लगा है इसलिये आने वाले समय में इस कौम का अपना रूतबा होगा, अपनी इज्जत होगी। यदि यह कौम अपनी लाईन पर कायम रही तो इसका सांणी दुनियां में कोई नहीं होगा। यह एक परम् संत के वचन हैं।

मां मरियम और माता कुन्ती उस वक्त कुंवारी थी जब उन्होंने पुत्रों को जन्म दिया। कुंवारेपन के समय प्रियतम और प्रियतमा में एक-दूसरे के प्रति जो प्रेम और समर्पण संभव है, विवाह के बाद उसकी संभावना कम हो जाती है। विवाह के बाद एक-दूसरे की कमियां उजागर होने लगती हैं लेकिन विवाह से पहले यदि कोई खुदा है तो वह है प्रियतम या प्रियतमा। लेकिन विवाह से पहले यदि कन्या गर्भवती हो जाए तो उसके लिये पुत्र को जन्म देना कितना संघर्षपूर्ण और मानसिक पीड़ा का कार्य है, इसका अन्दाजा सहज ही लगाया जा सकता है। इसलिये कुन्ती युद्ध से पहले स्वयं कर्ण के पास गई और उसके सामने अर्जुन के जीवन के लिए झोली फैला दी। अर्जुन के लिए जीवनदान का अर्थ था कर्ण के लिए मौत का फरमान लेकिन कर्ण ने अपनी माता के वचन को

रखने के लिए अपनी मौत का चुनाव किया। वास्तव में कर्ण के लिए मौत का यह फरमान महाभारत के युद्ध के समय नहीं लिखा गया था बल्कि स्वयं कुंती के द्वारा गर्भ के समय दोनों पुत्रों के अन्दर डाला गया विचार या संस्कार था जिसमें उसने कर्ण के लिये मौत और अर्जुन के लिए जीवन का चुनाव किया था। युद्ध के समय तो उस ख्याल या संस्कार की केवल पुनरावति थी।

मां मरियम और जीसस की कहानी आज से दो हजार साल पहले की है उस समय यदि कोई अविवाहित औरत ऐसा कार्य करती थी तो उसे यहूदी धर्म के धार्मिक नियमों के अनुसार एक गुनाह माना जाता था और उस औरत को पत्थर मार-मार कर मत्यु दण्ड दिया जाता था। इसी बात से अन्दाजा लगाया जा सकता है कि यदि मां मरियम ने कुंवारी होकर जीसस को जन्म दिया था तो उनको किन-किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा होगा और उन्होंने किन-किन अन्तर्द्वन्दों व संघर्ष से गुजरकर समाज का मुकाबला किया होगा, इसके बारे में केवल कल्पना ही की जा सकती है। ऐसी परिस्थितियों से होकर जिस बच्चे का जन्म होता है वह बच्चा कुदरत के संघर्ष से बच नहीं सकता है। इसलिए परमात्मा ने विशेष कार्य के लिए ऐसी परिस्थितियों का चुनाव किया जिसमें उन्होंने समय आने पर स्वयं को सूली चढ़ाने के लिए निर्दयी हाथों में सौप दिया।

प्रकति माता परमात्मा की शक्ति के रूप में कार्य करती है और उसकी इच्छा को कार्यान्वित करती है। इसके लिए उसे परिस्थितियां पैदा करने के लिए कभी प्रेम तो कभी क्रूरता का खेल खेलना पड़ता है लेकिन सब कुछ एक नियम के अधीन होता है इस

नियम को इसाई संतों ने दैविक कानून (Divine Law) का नाम दिया है। किसी ने इसी कानून को शैतान तो किसी ने इसे माया और काल कहा है। यदि माया और शैतान न हों तो साधक की आत्म-शुद्धि न हो सकेगी। उसकी कमियों पर चोट न लग सकेगी और उसे परमात्मा की शक्ति की पहचान न हो सकेगी। एक ही शक्ति या ऊर्जा का अलग-अलग स्तर पर नियम के अधीन कार्य हो रहा है और जब यह कार्य या कुदरत का कानून हमारी समझ में नहीं आता तो हम उसे चमत्कार कहने लगते हैं।

प्रस्तुत विवेचन से स्पष्ट है कि जीवन में मानसिक, आत्मिक और यहां तक शारीरिक श्रेष्ठता प्राप्त करने के लिए विचारों या ख्याल को ऊंचा रखना और उनकी शुद्धता बनाए रखना निहायत जरूरी है। परमात्मा का जो कार्य हमें निर्मम या निर्दयी नजर आता है उसमें ना जाने मानवता का कौन सा कल्याण छिपा हुआ होता है जिसे हमारी सीमित दष्टि देख नहीं पाती है।

अवतार या पुरूषोतम का अवतरण समय की आवश्यकता के अनुसार होता है। जैसी आवश्यकता होती है कुदरत वैसी ही परिस्थितियां पैदा कर देती है। जिस स्तर की चेतना के अवतरण के लिए मांग उठती है उसी स्तर की आत्मा परमात्मा की शक्ति बनकर जन्म लेती है और जीवों का उद्धार करती है। अवतार कोई जन्म से नहीं होता बल्कि उसे भी ध्यान-अभ्यास के द्वारा आन्तरिक अनुभव के दर्जे पार करने ही पड़ते हैं। हर व्यक्ति के अन्दर मूल या बेसिक शक्ति अलग-अलग अवश्य हो सकती है।

राधास्वामी।

जिज्ञासुओं के लिए प्रश्न

- क्या धर्म रोजी-रोटी दे सकता है?
- क्या अध्यात्म से दु:खों का छुटकारा हो सकता है?
- क्या अध्यात्म धन और आश्रमों का मोहताज हो गया है?
- क्या सत्संग केवल धन कमाने का साधन बन गया है?
- क्या धर्म देश और समाज को सुरक्षा दे सकता है?
- क्या धर्म बिखरे व्यक्तित्व और समाज को जोड़ सकता है?
- क्या परमात्मा अमीर लोगों की धरोहर बन गया है?
- अध्यात्म क्या है? आत्मा का स्वरूप क्या है?
- क्या अध्यात्म, विज्ञान और संसार एक दूसरे के विरोधी हैं?
- क्या शरीर, मन व आत्मा अलग-अलग हैं?
- कुण्डलीनी जागरण क्या है?
- अनहद शब्द व धुन में क्या अन्तर है?
- परम्परावादी और आत्मनिष्ठ धर्म में क्या अन्तर है?
- कर्मकाण्ड बन्धन व दु:ख का कारण क्यों बन जाता है?
- सभी धर्मों की उत्पत्ति मानसिक संसार से है, कैसे?
- अच्छी संगत से बुरे कर्म कैसे कट जाते हैं?
- सतगुरू सूली का दर्द सूल में कैसे बदल देता है?
- सिद्ध पुरूष की इच्छा शक्ति मजबूत क्यों हो जाती है?
- सृष्टि की प्रलय व शरीर की मृत्यु का क्या सम्बन्ध है?
- अभ्यास की अट्ठारह मंजिलें कौन सी हैं?
- क्या भाग्य को बदला जा सकता है?
- क्या मन व अंहकार वास्तव में बुरे हैं?
- अध्यात्म के लिए विशाल दृष्टि जरूरी क्यों?
- सुरत-शब्द योग का मार्मिक रहस्य क्या है?
- व्यक्तिगत अस्तित्व व ब्रह्माण्ड में कितनी समानता है?
- ध्यान से समस्याओं का समाधान कैसे मिलता है?
- ध्यान से संसार का विनाश भी हो सकता है, कैसे?
- प्रेतात्मा व देवात्मा के प्रकट होने का कारण व अर्थ
- उत्पत्ति व प्रलय का वैज्ञानिक व अध्यात्मिक आधार क्या है?
- नाम व ध्यान का विज्ञान क्या है?
- कामधेनू गाय व कल्ववृक्ष की प्राप्ति क्या है?
- असम्प्रज्ञात समाधि की प्राप्ति कैसे हो?

.....इत्यादि प्रश्नों के उत्तर जानिऐ?

राधास्वामी सत्संग ताराधाम, कुरूक्षेत्र

पुस्तक सूची

1. सतगुरू ताराचन्द जी महाराज के 101 अनमोल रत्न
2. रूहानी पत्र व सतगुरू आदेश
3. आत्मिक सफर और रूहानी मंजिलें (प्रश्नोतरी)
4. संत अवतरण
5. सम्यक समाधि : आत्मिक सफर की कहानी
6. पुरूष-प्रकृति
7. ईसा-मसीह कौन हैं?
8. युद्ध और जीवन दर्शन
9. अवतार अवतरण रहस्य
10. अध्यात्म से इच्छा शक्ति मजबूत कैसे होती है?
11. प्रेम और भक्ति का शिखर
12. सत्य और धर्म का अनुभव क्या इसी जन्म में संभव है?
13. टूटते रिश्ते बढ़ता अंधविश्वास व अध्यात्म
14. बच्चों पर सत्संग का प्रभाव
15. विश्व की समस्याएं और आध्यात्मिक समाधान
16. पृथ्वी पर ईश्वर का साम्राज्य
17. क्या धर्म, विज्ञान और संसार अलग-अलग हैं?
18. मनुष्य के लिए अध्यात्म जरूरी क्यों ?
19. आध्यात्मिक संकल्प, मार्ग एवं लक्ष्य